# संकटोत्तर विश्व में विनियमन और पर्यवेक्षण के प्रति दृष्टिकोण*

*आनंद सिन्हा*

मिस उषा थोरात, निदेशक सेंटर फॉर एडवांस्ड फाइनेंशियल रिसर्च एंड लर्निंग (सीएएफआरएएल), वरिष्ठ पर्यवेक्षक और अंतरराष्ट्रीय कन्सलटैंट श्री अरिस्टोब्युलो दे जुआन, फ्रैंच बैंकिंग आयोग के भूतपूर्व डिप्टी सेक्रेटरी जनरल श्री पीयरे येव्स थोरावल, टोरोंटो सेंटर में प्रोग्राम डायरेक्टर मि. क्रिस कारडोज़ा, भारतीय रिज़र्व बैंक की भूतपूर्व उप-गवर्नर मिस श्यामला गोपीनाथ तथा सम्मेलन के आदरणीय डेलीगेट्स, आज इस सम्मेलन में आप सबको उद्बोधित करते हुए मुझे गर्व का अनुभव हो रहा है।

2. इस सम्मेलन को 'संकटोत्तर विश्व में पर्यवेक्षकीय प्रभावशीलता' नामक जो शीर्षक दिया गया है वह थीम के एकदम उपयुक्त है। संकट ने जो नुकसान किया है उसकी भरपाई के लिए नीति निर्माता तथा पर्यवेक्षक, अभी भी जूझ रहे हैं। कितनी स्याही और कितने कागज इस संकट के 'क्या' 'क्यों' और 'कैसे' को बताने के लिए खर्च किए गए हैं इसका कोई अंदाजा ही नहीं। पुराने विनियमों की जगह नए विनियम आ गए हैं और नए सिद्धांत सामने आ गए हैं जिन्होंने पुराने और संकट के कारण क्षतिग्रस्त हो चुके विश्वासों को एकदम दर किनार कर दिया है। मगर एक प्रश्न अभी भी अनुत्तरित है, क्या हम सचमुच संकट से बाहर आ गए हैं, और संकटोत्तर विश्व में प्रवेश कर चुके हैं? क्या संकट इतिहास हो चुका है? और पीछे छूट गया है? लेकिन ऐसा लगता तो नहीं। यदि हम विश्व आर्थिक परिदृश्य (डब्ल्यूईओ-जनवरी 2013) का नवीनतम आईएमएफ अपडेट देखें तो पाएंगे कि वृद्धि दरें, चाहे थोड़ी ही सही, संशोधित कर नीचे कर दी गई हैं अर्थात् 2013 के लिए 3.5 प्रतिशत तथा 2014 के लिए 4.1 प्रतिशत और इसमें विशिष्टतः उल्लेख है कि यूरो क्षेत्र विश्व अर्थव्यवस्था के लिए, अर्थव्यवस्था को नीचे की ओर ले जाने वाला एक बड़ा खतरा बना हुआ है।

3. यदि हम वित्तीय संकटों के इतिहास की ओर देखें तो हम पाएंगे कि ऐसे कई संकट पहले भी आ चुके हैं। सबसे पहला ज्ञात संकट, तेरहवीं सदी में आया था जबकि इंग्लैंड ने चूक की थी। हाल के वर्षों में भी, कुछ अतीत में और कुछ वर्तमान में, संकट आए हैं जैसे 1929 का ग्रेट डिप्रेशन, 1987 का शेयर बाजार क्रैश, 1997 का एशियाई संकट, 80 तथा 90 के दशक में कई देशों में बैंकिंग संकट, तथा 2000 का डॉट कॉम बब्बल इत्यादि। हाल के वर्षों में 2007 में वैश्वीय वित्तीय संकट आया और अभी हाल ही में सार्वभौम कर्ज़ संकट आया जो अभी चल रहा है। तथापि ये सभी संकट (वैश्वीय वित्तीय संकट को छोड़कर) 1929 के 'द ग्रेट डिप्रैशन' की तुलना में बहुत ही छोटी मात्रा के रहे हैं। 2007 का वैश्वीय वित्तीय संकट निश्चय ही बहुत बड़ा है और उसने वैश्विक अर्थव्यवस्था पर बड़ा ही विनाशकारी प्रभाव डाला है। जैसा कि शांति के बारे में कहा जाता है कि यह दो युद्धों के बीच का अंतराल है। इसी प्रकार हाल के वर्षों में संकटों की भरमार को देखते हुए हम कह सकते हैं कि एक शांत अवधि, दो संकटों के बीच का अंतराल है। भूतकाल में वित्तीय संकटों का ऐसा ही इतिहास रहा है।

## वैश्वीय वित्तीय संकट भिन्न कैसे था?

4. यदि वित्तीय इतिहास संकटों से अवरुद्ध था तो यह कैसे हुआ कि वर्तमान वैश्विक वित्तीय संकट ने व्यापन तथा प्रभाव की दृष्टि से इतना विशाल रूप अख्तियार कर लिया। प्रसिद्ध पुस्तक 'दिस टाइम इज़ डिफरेंट - ऐट सैंचरिज़ ऑफ फाइनेंशियल फॉली' में यह कहा गया है कि सभी संकट चाहे वे छोटे हों या बड़े, समान मूल के होते हैं और सिर्फ हम ही हैं जो उन्हें पहचानते नहीं। तथापि वर्तमान संकट के इस विशाल और असमानांतर आयाम को देखते हुए यह अवश्य मानना पड़ेगा कि इसके कुछ अन्य गंभीर कारण भी रहे होंगे। वस्तुतः अगर आपको याद हो, यह संकट अमरीकी वित्तीय प्रणाली के एक छोटे से घटक, 'सब - प्राइम बाज़ार' से शुरू हुआ और बहुत से लोग आमतौर पर आशावादी थे, और उन्होंने इस संकट को यह कह कर डिस्मिस ही कर

* 4 फरवरी 2013 को मुंबई में सेंटर फॉर एडवांस्ड फाइनेंशियल रिसर्च एंड लर्निंग (काफराल) द्वारा 'संकटोत्तर विश्व में पर्यवेक्षीय प्रभावशीलता' नामक विषय पर आयोजित कार्यक्रम में भारतीय रिज़र्व बैंक के उप-गवर्नर श्री आनंद सिन्हा द्वारा दिया गया मुख्य- विषय-भाषण, श्री अजय कुमार चौधरी, मिस अनुपम सोनल, रजनीश कुमार और श्री जय कुमार यारासी द्वारा प्रदान किए गए इन्पुट्स के प्रति हार्दिक आभार प्रकट किया जाता है।

दिया था कि यह एक छोटा सा और स्थानिक संकट है और न इसके फैलने का खतरा है और न इसका दूसरे घटकों पर कोई असर ही पड़ेगा। मगर हुआ उल्टा और शीघ्र ही यह संकट विस्फोट की तरह फैला और इसने न केवल, अमरीकी वित्तीय प्रणाली बल्कि समूचे विश्व को निगल लिया। इसलिए निश्चित यह मानना पड़ेगा कि प्रणाली में अवश्य ही कुछ मूलभूत कमजोरियां रही होंगी जिन्होंने संकट को इतना तेज कर दिया।

5. अब मैं आपको संकट की मात्रा के संबंध में कुछ विवरण दूंगा। मैं यहां एण्ड्रयू शेंग की पुस्तक 'फ्रॉम एशियन टू ग्लोबल फाइनेंशियल क्राइसिज़' का उद्धरण दूंगा जहां वे एक टैक्स्ट मैसेज का हवाला दे रहे हैं, जो दिसंबर 2008 में काफी चर्चित रहा। एक वर्ष पूर्व आरबीएस ने एबीएन एमरो के लिए सौ बिलियन अमरीकी डॉलर का भुगतान किया। आज हम इसी राशि से खरीद सकते हैं - सिटी बैंक 22.5 बिलियन अमरीकी डॉलर, मॉर्गन स्टैनली 10.5 बिलियन अमरीकी डॉलर, गोल्ड मैन सैक्स 21 बिलियन अमरीकी डॉलर, मैरिल लिंच 12.3 बिलियन अमरीकी डॉलर, ड्यूश बैंक 13 बिलियन अमरीकी डॉलर, ब्रार्कलेज 12.7 बिलियन अमरीकी डॉलर और इन सबके बाद भी आपके पास 8 बिलियन अमरीकी डॉलर का छुट्टा बचता है जिससे आप जीएम, फोर्ड, क्रिस्लर तथा होंडा एफ1 टीम खरीद सकते हैं। संकट का यह आयाम दिखाता है कि संकट गहराने के समय बैंकों और वित्तीय संस्थाओं का वैल्यूएशन कैसे औंधे मुंह गिरा था।

6. अर्थव्यवस्थाएं चक्रों के हिसाब से चलती हैं अर्थात् चढ़ाव और उतार अथवा तेजी और मंदी और ये आते भी जल्दी-जल्दी हैं और जब वित्तीय संकट आते हैं तो वे आने में समय लेते हैं। इतिहास बताता है कि वित्तीय संकटों के बाद जो मंदी आती है वह आम मंदी से बहुत बड़ी होती है और उत्पादन की क्षतियां दुगनी-तिगुनी होती हैं और वित्तीय संकट के बाद मंदी से उबरना भी बहुत धीमा होता है जैसा कि हम आज देख रहे हैं। इसका मुख्य कारण वह लिवरेज है जो संकट निर्मित होने के साथ-साथ निर्मित हो जाती है और अर्थव्यवस्था के विकास में अड़ंगा डालने का काम करती है और बहाली को धीमा कर देती है। यही कारण है कि केंन्द्रीय बैंकों द्वारा भारी मात्रात्मक ईज़िग और प्रभुसत्ताओं द्वारा राजकोषीय उत्प्रेरकों के बावजूद वैश्विक अर्थव्यवस्था वैश्विक संकट से अभी तक काफी हद तक उबरनी बाकी है।

7. इस संकट ने विश्व को काफी बड़े पैमाने पर वित्तीय तथा गैर वित्तीय दोनों तरह से प्रभावित किया है। जहां वित्तीय प्रभाव, विशाल उत्पादन हानियों, बेरोज़गारी में बढ़ोतरी तथा संपदा के क्षरण में परिलक्षित हुआ है, वहीं, गैर वित्तीय प्रभाव भी कोई कम नहीं है। संकट ने सदियों से चले आ रहे विश्वासों और धारणाओं को जड़ से हिला कर रख दिया है। जब हम यह सोच ही रहे थे कि हमने सब सवालों के जवाब पा लिए हैं तो इस संकट ने नए सवाल खड़े कर दिए और अब हमें नए जवाब ढूंढने पड़ रहे हैं। इससे मुझे भौतिक शास्त्र का स्मरण हो आता है जिसमें कि मैं स्नातक हूँ और जो कि मेरा प्रिय विषय है। पिछली सदी के दौरान भौतिक शास्त्रियों ने यह निष्कर्ष निकाल लिया था कि प्रकृति के नियमों के बारे में उन्हें जो कुछ भी जानना था वह सब उन्होंने जान लिया है अब सिर्फ इतना ही बाकी है कि इन नियमों को अमल में लाया जाए ताकि कुछ सवालों के जवाब मिल सकें। इसी के बाद दो प्रमुख प्रयोग हुए जिन्होंने समूचा परिदृश्य ही बदल दिया और इस घटना के स्पष्टीकरण के लिए दो एकदम भिन्न सिद्धांत पैदा हो गए। इसी तरह की घटनाएं वित्तीय विश्व में भी हुई हैं। हालांकि उतनी बड़ी मात्रा की तो नहीं, मगर उन्होंने बौद्धिक आधारों को हिलाकर रख दिया है और हमें नए सवालों के जवाब ढूंढने को मजबूर कर दिया है। विनियामक दर्शन तथा दृष्टिकोण, खासकर प्रणालीगत जोखिम, और सक्षम बाजार परिकल्पना की सोच में तथा साथ ही बृहद् आर्थिक विचारों में भी निदर्शनात्मक बदलाव आया है। उदाहरण के तौर पर वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने में मौद्रिक नीति की भूमिका, बृहद् आर्थिक मॉडलों में बैंकिंग तथा वित्तीय प्रणाली गतिशीलताओं का इनकार्पोरेशन, और यह मानते हुए कि वृहद् आर्थिक स्थिरता वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए एक आवश्यक स्थिति तो है मगर पर्याप्त स्थिति नहीं।

8. जिन जोखिमों से संकट पैदा हुआ और तेज़ हुआ उन्हें दूर करने के लिए संकट के उपरांत काफी कार्य शुरू किए गए। संकट से शिक्षाएं लेते हुए विनियमन और पर्यवेक्षण के दृष्टिकोण में भारी बदलाव आया है। इससे पूर्व कि मैं संकटोत्तर विश्व में विनियमन और पर्यवेक्षण के पुनर्रचित दृष्टिकोण पर बात करूँ मैं थोड़ा पीछे जाकर संकट की

उत्पत्ति के बारे में संक्षेप में कहना चाहता हूँ। इससे न केवल चीजों को सही परिप्रेक्ष्य में देखने में मदद मिलेगी बल्कि जैसे जैसे हम संकट के कारणों पर चर्चा करते जाएंगे वैसे-वैसे इनके समाधान भी स्वयं ही निकलते आएंगे।

## उत्पत्ति

9. इस संकट के लिए बहुत से कारण उत्तरदायी थे तथापि इसका मुख्य कारण था बड़े पैमाने पर अल्पावधि मीयादी देयताओं वाली परिसंपत्तियों के जोखिमों और फंडिंग की अपर्याप्त समझ और मापन। डॉट कॉम बुलबुले के फूटने के बाद अमरीका में मौद्रिक नीति की आक्रामक ईज़िग हुई जिससे ब्याज दरें बहुत ही ज्यादा कम हो गई। वैश्विक असंतुलनों के कारण अमरीका में दीर्घावधि कमाई को भी नुकसान पहुंचा क्योंकि खासकर चीन समेत कई देशों ने जो भारी रिज़र्वज़ बना रखे थे उन्होंने वापस अमरीकी खजानों की राह ली। इसके बाद आया 'ग्रेट मॉडरेशन' का युग, जिसमें उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में सतत विकास हुआ और उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में तेज वृद्धि हुई और मुद्रास्फीति कम और स्थिर रही इससे नीति निर्माताओं को यकीन हो गया कि उन्हें उच्च विकास और कम मुद्रास्फीति की राह मिल गई है। इस यकीन के पीछे धारणा यह थी कि बाजार परिपक्व और व्यवहार कुशल हो गए हैं और उनके पास जोखिम वितरण करने, और जिन्हें जरूरत है, उन्हें सक्षम बचाव के लिखत प्रदान करने के साधन हैं। कम ब्याज दरों से कमाई की नई राह की खोज शुरू हो गई जिसने वित्तीय नवोन्मेष को जन्म दिया जो कि सामाजिक रूप से सब-ऑपटिमल था। इस नवोन्मेष की सहायता की, मात्रात्मक वित्त तथा मॉडलिंग और प्रौद्योगिकी विकास में हुई प्रगति ने हालांकि हम वित्तीय मॉडलों की उपयोगिता की अवमानना नहीं कर सकते वे निश्चय ही काफी उपयोगी हैं - मगर इन पर अत्यधिक भरोसा ही खतरनाक सिद्ध हुआ। भौतिक शास्त्र में प्रयोग किए जाने वाले मॉडल, प्रकृति के अ-परिवर्तनीय नियमों द्वारा शासित नहीं होते, बल्कि मानव व्यवहार द्वारा शासित होते हैं जैसे भेड़चाल, अतार्किक उल्लास और नैराश्य, लालच और भय, जिनकी सटीकता के साथ मॉडलिंग नहीं की जा सकती। इसलिए इन मॉडलों का प्रयोग करते समय इन सीमाओं का ध्यान रखा जाना जरुरी है।

10. संकट से पहले कम ब्याज दरों ने लीवरेज बनाने में मदद की। वस्तुतः यदि हम ध्यान से देखें तो अधिकांश संकटों का मुख्य कारण लीवरेज ही है। मैं संक्षेप में समझाता हूँ। जब समय अच्छा होता है तो सब अच्छा महसूस करते हैं। बहुत-सी सस्ती चलनिधि होती है, परिसंपत्तियों तथा संपार्श्विकों के मूल्य बहुत ऊंचे होते हैं, और बैंकिंग प्रणाली की हानियां कम होती हैं, जिससे प्रावधानन कम हो जाता है और पूंजी संबंधी ज़रुरतें भी कम हो जाती हैं। ऐसी स्थिति में परिवारों और कार्पोरेट्स की ओर से क्रेडिट की मांग और बढ़ जाती है। बैंकों की दृष्टि से देखें, तो चूंकि प्रावधानन और पूंजी जरुरतें कम होती हैं इसलिए उनके पास सरप्लस पूंजी होती है और पूंजी जुटाना भी आसान होता है। इससे ऋण वितरण हेतु और तुलन-पत्र बढ़ाने के लिए और प्रोत्साहन मिलता है। इस प्रकार उधारकर्ताओं से बढ़ी ऋण मांग और उधार देने के लिए बैंकों के पास अधिक प्रोत्साहन से लीवरेज बनना शुरु हो जाता है मगर जब चक्र उल्टा हो जाता है तो नैराश्य छा जाता है, हानियां बढ़ जाती हैं, परिसंपत्तियों और संपार्श्विकों की कीमत घट जाती है तथा चलनिधि सूख जाती है और महंगी हो जाती है इससे बैंकों, घरों तथा कार्पोरेट्स का वित्तीय स्वास्थ्य गिर जाता है और वे जोखिम लेने से विमुख हो जाते हैं। ऋण के लिए घरों और कार्पोरेट्स की मांग, बैंकों द्वारा ऋण की आपूर्ति, धीमी पड़ जाती है। बैंक अपनी पूंजी को सुरक्षित रखने के लिए डिलीवरेज हो जाते हैं। इन सब से उतार की प्रक्रिया तेज़ हो जाती है। लीवरेज एक एम्प्लीफायर है जो चढ़ाव के दौरान लाभों को बढ़ाता है और उतार के दौरान हानियों को बढ़ाता है। लीवरेज जितना अधिक होगा उतार भी उतना तेज़ होगा। इसी एम्प्लीफिकेशन को पूर्व चक्रिकता कहते हैं। संकट से पहले विनियामक नीतियां पूर्वचक्रिकता तथा अंतर्जुड़ावों से पैदा होने वाले प्रणालीगत जोखिमों का प्रभावी ढंग से हल नहीं खोजती थी।

11. प्रणालीगत जोखिमों की समझ में कमी और ऐसे जोखिमों का सामना करने के लिए उपयुक्त विनियामक ढांचा न होने के कारण ही संकट में इतनी तेजी आई। यही संकट के मुख्य कारणों में से एक था। संकट से पहले प्रचलित सोच यही थी कि मजबूत व्यक्तिगत संस्थाओं से ही प्रणाली मजबूत होती है। मगर यह धारणा सही साबित नहीं हुई। संकट से यह तथ्य उभरा कि चाहे संस्थाएं व्यक्तिगत रूप से कितनी भी मजबूत क्यों न हों, जब इन में से प्रत्येक संस्था

अपना ही हित देखना शुरू कर देती है तो प्रणाली के अस्थिर होने के खतरे बढ़ जाते हैं।

12. ऋण जोखिम अंतरण तंत्र में भी काफी कमियां थीं। प्रतिभूतीकरण, जो कि जोखिमों के सक्षम अंतरण के लिए एक बहुत उपयोगी वित्तीय नवोन्मेष माना जाता था और मुझे अभी भी यकीन है कि यह एक बहुत उपयोगी उपकरण है इसका इस्तेमाल तब सही ढंग से नहीं किया गया, जब विकृत प्रोत्साहन अपना कार्य कर रहे थे।

13. पर्यवेक्षण तथा विनियिामक संबंधी ढांचे और दर्शन में भी काफी गंभीर कमियां (अंतराल) थी। मैं जल्दी-जल्दी कुछ ऐसे विनियामक और पर्यवेक्षकीय अंतरालों की बात करूंगा। सबसे अधिक आवश्यक बात यह है कि बैंकों के पास रखी पूंजी गुणवत्ता तथा मात्रा दोनों ही दृष्टियों से अपर्याप्त थी; चलनिधि भंडार भी अपर्याप्त थे क्योंकि वित्तीय संस्थाएं इसी धारणा पर कार्य कर रही थी कि बाजार हर वक्त लिक्विडिटी प्रदान करते रहेंगे और इसीलिए उन्होंने अपनी दीर्घावधि परिसंपत्तियां काफी कम अवधि वाली देयताओं में वित्त पोषित कर दी। बकाया पुनर्खरीद करार (रेपो) 2001 से 2007 के बीच तिगुने हो गए तथा ओवर-नाइट रेपो में तेजी से वृद्धि हुई। वित्तीय कंपनियां भी अत्यधिक रूप से लीवरेज्ड थीं और कई वाणिज्यिक बैंकों के लिए लीवरेज 2003 के बाद से काफी अधिक हो गई थी। पूंजी पर्याप्तता अपेक्षा का अनुपालन करने के बावजूद वित्तीय संस्थाओं द्वारा उच्च लीवरेज निर्मित किए जा सकते थे जिससे कि जोखिम मापन विधियों और मॉडलों में गंभीर कमियां इंगित होती हैं। उदाहरणार्थ दो बड़े स्विस बैंक, जो सर्वोत्तम पूंजीकृत में से थे, वे भी संकट के दौरान दबाव में आ गए।

14. ओटीसी बाजारों में पारदर्शिता का अभाव एक अन्य ऐसा तत्त्व था जिसने प्रणाली में जोखिमों को बढ़ाने में योगदान दिया। प्रतिपक्षों की तो बात ही छोड़ दें, पोज़ीशन बिल्डिंग के बारे में जानकारी, विनियामकों तक के पास उपलब्ध नहीं थी। विशाल बीमा कंपनी एआईजी ने वृहद् ऋण सुरक्षा (400 बिलियन अमरीकी डालर) लिखी और, परिणामस्वरूप विशाल प्रीमियम इकट्ठे किए, यह भरोसा करते हुए कि इस राशि की जरूरत, सुरक्षा खरीदने वालों के दावों के निपटान के लिए नहीं पड़ेगी। चूंकि बाजार भागीदारों को, एआइजी द्वारा बेची गई सुरक्षा की मात्रा के बारे में नहीं पता था इसलिए वे एआइजी से ऋण की सुरक्षा खरीदते रहे और जब प्रणाली गहरे दबाव में आई और एआईजी को ऊंचे मार्जिन पोस्ट करने की जरूरत पड़ी तो वह गहरे संकट में फंस गई और आखिरकार उसे फैडरल रिज़र्व ने ही बचाया।

15. अधो/अविनियमित 'शेडो बैंकिंग प्रणाली' का फलना -फूलना भी संकट बढ़ने का कारण बना। संकट से पूर्व शैडो बैंकिंग प्रणाली में तेज़ी से वृद्धि हुई थी। अमरीका में जब ऋण उछाल पर था तो उस समय इस सेक्टर से वित्त पोषण, विनियमित बैंकों से किए जाने वाले वित्तपोषणों से कहीं अधिक था। अमरीका सहित कई उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में 'शेडो-बैंकिंग' तंत्र, आज भी नियमित बैंकिंग तंत्र से बड़ा है। विनियामक दृष्टिकोण से 'शैडो-बैंकिंग प्रणाली' के प्रति अपनाया जाने वाला 'स्पर्श निषेध दृष्टिकोण' कुछ अवधारणाओं तथा विश्वासों पर आधारित है। पहला था - बाजार - अनुशासन तथा स्वविनियम पर अत्यधिक भरोसा। यह यकीन था कि 'शैडो-बैंकिंग' अनुशासन से नियंत्रित हो जाएगी अर्थात् बैंकों द्वारा डाला गया तथा अन्य बाजार भागीदारों और स्वयं उनके द्वारा डाला गया स्वअनुशासन। दूसरा यह भी विश्वास था कि वित्तीय स्थिरता दृष्टिकोण से केवल बैंक ही महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि जमाराशियां उन्हीं के पास थी और भुगतान तथा निपटान प्रणालियों के मूल में भी वही थी। तीसरा - यह अवधारणा भी थी कि यदि शैडो बैंकिंग तंत्र को, बैंकों के एक्सपोज़र से विनियमित किया गया, तो शैडो बैंकिंग प्रणाली में जोखिम रखना आसान होगा। चौथा - यह भी यकीन किया गया था कि शैडो बैंकिंग तंत्र का विनियमन बहुत महंगा होगा, नवोन्मेष को घटाएगा और जोखिम अंतरण में बाधा डालेगा।

16. वित्तीय संस्थाओं की हरजाना संरचना में भी गंभीर त्रुटियां थीं, क्योंकि यह विकृत प्रोत्साहन को बढ़ावा देती थी और इसीलिए संकट के फैलने के प्रमुख कारणों में से एक थी। भागीदारों को अल्पावधि परफार्मेंस के आधार पर भारी बोनस दिए गए, चाहे उनमें जुड़े जोखिमों से, बाद में कितना नुकसान भी क्यों न हो। हरजाना संरचना ने लाभों को प्राइवेट रूप से बांटने को प्रोत्साहित किया जिससे अंततः खजाने पर ही बोझ पड़ा।

17. संकट पूर्व अवधि में समूचा विनियामक दृष्टिकोण 'हल्की छुअन विनियमन' की ओर दिशा बदल रहा था।

सक्षम बाजार अवधारणा पर अंधा भरोसा था जिससे लोगों को यकीन था कि आवश्यकता पड़ने पर बाजार खुद को ठीक कर लेंगे। मगर इस विश्वास ने वित्तीय बाजारों के सुपरिचित भेड़चाल और अतार्किक व्यवहार को अनदेखा कर दिया। यदि हम किसी भी जोखिम वितरण को देखें तो ऐसे कई मोटे सिरे (फैट टेल्ज़) पाएंगे, जो अतार्किकता के कारण होते हैं। नकारात्मक मोटे सिरे, अत्यधिक नैराश्य के कारण होते हैं जबकि सकारात्मक मोटे सिरे अति उत्साह के कारण होते हैं।

18. जहां तक पर्यवेक्षण का संबंध है, संकट पूर्व अवधि में इसकी भी अपनी त्रुटियां थीं। पर्यवेक्षण की भूमिका यह होती है कि वह उस वक्त सवाल पूछे जब सब कुछ सही चल रहा हो। जब वित्तीय प्रणाली अथवा व्यक्तिगत एन्टीटीज़ ठीक कार्य नहीं कर रही होती हैं, तो पर्यवेक्षक हस्तक्षेप करते ही हैं। परंतु पर्यवेक्षकों को 'पूर्व क्रियात्मक' होना चाहिए और तब सवाल पूछने चाहिएं जब सब ठीक चल रहा हो। तथापि यहां यह स्वीकार करना होगा कि जब सब सही चल रहा हो और आप सवाल पूछें, तो लोग आपको खेल-बिगाडू बताएंगे, यह वास्तव में मुश्किल काम है। पर्यवेक्षक को अस्पृहणीय कार्य करना होता है। वाणिज्य बैंकों के पास कई स्मार्ट लोग होते हैं, मगर विनियामकों के पास उनसे सवाल करने के लिए और भी स्मार्ट लोग होने चाहिएं और यहीं कौशल और प्रौद्योगिकी सामने आती हैं। संकट के बनने के समय यह पाया गया कि पर्यवेक्षक किनारे खड़े रहते थे और भागीदारों के कामों में पर्याप्त हस्तक्षेप नहीं करते थे। वे उभरते जोखिमों का सामना करने और बदलते वातावरण में खुद को ढालने में पूर्व-सक्रिय नहीं थे। उनमें पहचानने अथवा पहचाने जाने पर कार्रवाई करने की क्षमता का अभाव था। उदाहरणार्थ, जब बैंकों ने बहुत जटिल उत्पादों में डीलिंग शुरू की अथवा जब उन्होंने अपने परिचालनों के लिए अल्पावधि फंडिंग पर अत्यधिक यकीन करना शुरू किया तो पर्यवेक्षक, बनते जोखिम को देख नहीं पाए। पर्यवेक्षण व्यापक नहीं था, और जब पर्यवेक्षकों ने असंगति देखी भी, तो भी उन्होंने उसे निष्कर्ष नहीं माना।

19. तथापि भारत पर संकट का प्रभाव अपेक्षाकृत कम था क्योंकि इसका सब-प्राइम परिसंपत्तियों पर कोई सीधा एक्सपोज़र नहीं था और असफल संस्थाओं और दबाव वाली संपत्तियों पर एक्सपोज़र बहुत ही कम था। भारतीय वृद्धि अधिकांशतः घरेलू मांग द्वारा ही चालित थी और इसके अतिरिक्त, वृहद् विवेकाधीन विनियमों की कुछ विशेषताएं पहले ही लागू थी। हमारे यहां वैश्विक संकट से कम से कम चार पांच साल पहले ही पूर्वचक्रिकता तथा अंतर्जुड़ाव दोनों ही तरह के प्रणालीगत जोखिमों का सामना करने के लिए सतर्कता थी। हमने मजबूत ओटीसी मार्केट इन्फ्रास्ट्रक्चर तथा केन्द्रीय काउंटर पार्टी तंत्र भी स्थापित कर रखे थे। सौभाग्य से हमने हमारी अपनी अवधारणाओं के आधार पर ही कुछ विनियमन लागू कर दिए थे जिन्हें अब अंतर्राष्ट्रीय जगत लागू कर रहा है। तथापि इन मुद्दों पर आज दृष्टिकोण अधिक संरचित है।

## विनियामक ढांचे की संरचना

20. संकट कैसे पैदा हुआ? इसकी पृष्ठभूमि बताने के बाद अब मैं उन विनियमों में सुधारों की ओर आता हूँ जो कि संकट से शिक्षा लेने के बाद विश्व भर में लागू किए गए। हर कमज़ोरी और त्रुटि, जिसका मैंने उल्लेख किया है, उसे ठीक करने का प्रयास किया गया। बासेल III विनियमों में पूंजी की गुणवत्ता और मात्रा बढ़ाना परिकल्पित है। कुल पूंजी के अंश के रूप में टीयर I पूंजी के घटक को बढ़ाकर 6 प्रतिशत कर दिया गया है (कुल 8 प्रतिशत सीआरएआर में से)। इक्विटी पूंजी की ज़रूरत को पहले की 2 प्रतिशत से काफी अधिक बढ़ा कर 7 प्रतिशत कर दिया गया है(पूंजीसंरक्षण अतिरिक्त भंडार के 2.5 प्रतिशत को मिलाकर)। पहले पूंजी संरक्षण अतिरिक्त भंडार की कोई अवधारणा नहीं थी। हालांकि बासेल II के स्तंभ II में इसी तरह की चीज़ अब है। स्तंभ - II, दो तरह के जोखिमों से डील करता है, (क) स्तंभ I के जोखिम, जो स्तंभ I में शामिल नहीं हैं जैसे कि बैंकिंग बुक में कन्सेंट्रेशन जोखिम तथा ब्याज दर जोखिम तथा (ख) दबाव का सामना करने के लिए बैंकों के पास ज़रूरी अतिरिक्त पूंजी का अनुमान तथा बैंकों पर दबाव की स्थिति का प्रभाव।

21. संकट के दौरान यह पाया गया कि बैंकों की व्यापारिक बहियों में हानियाँ, वी ए आर मॉडलों व्दारा आगणित हानियों से कई गुणा अधिक थीं। काउंटर पार्टी जोखिम ऋण के संबंध में यह पाया गया है कि अधिकतम हानियाँ आउट राइट चूक की बजाय काउंटर पार्टियों की ऋण की गुणवत्ता में गिरावट की वजह से प्रतिभूतियों की दैनिक बाजार मूल्य संबंधी (मार्क

टू मार्केट) क्षतियों के कारण हुईं। अतः बासेल III विनियमों ने, जोखिम कवरेज को विस्तारित किया खासकर व्यापारिक बहियों और काउंटर पार्टियों से संबंधित जोखिमों में।

22. चलनिधि के संबंध में कई वर्षों में पहली बार वैश्विक फ्रेमवर्क बनाया गया है -तीस दिवसीय क्षितिज में दबाव की स्थिति का सामना करने के लिए उच्च गुण वाली पर्याप्त तरल सम्पत्तियाँ रखने की बैंकों की अपेक्षा के संबंध में तथा साथ ही स्थिर निधियों के साथ दीर्घावधि परिसम्पत्तियाँ निधि प्रदत्त करने के लिए बैंकों की अपेक्षा द्वारा परिसम्पत्ति देयता बेमेलता से बचने के परिप्रेक्ष्य में भी।

23. मेरी दृष्टि से संकट की सबसे महत्त्वपूर्ण शिक्षा है प्रणाली के जोखिमों की पहचान और उनका हल निकालने के लिए एक ढाँचे का विकास। मैं इन मुद्दों पर संक्षेप में ही चर्चा करुंगा क्योंकि आपके सम्मेलन में प्रणालीगत जोखिम पर एक पूरा सत्र आने वाला है। प्रणालीगत जोखिम के दो आयाम हैं - पूर्वचक्रिकता, जिसे मैंने अभी-अभी स्पष्ट किया है तथा अन्तर्जुड़ाव। अन्तर्जुड़ाव की एक दिलचस्प विशेषता, जो कि नॉक आउट प्रभाव (एक अंतर्जुड़ाव संस्था से प्रणाली की दूसरी संस्था पर असर) से भिन्न है, वह यह है कि, यह किसी परिसंपत्ति अथवा परिसंपत्ति वर्ग पर साझे एक्सपोज़र द्वारा एक ही समय में अथवा लगभग उसी समय बहुत सी संस्थाओं पर एक साथ असर डाल सकता है। उदाहरणार्थ, यदि विविध संस्थाओं का एक परिसम्पप्ति पर एक्सपोज़र है और यदि उनमें से एक संस्था किसी अस्थायी चलनिधि दबाव के कारण परिसम्पत्ति की तुरत-फुरत बिक्री शुरू कर देती है तो इसके परिणामस्वरूप परिसम्पत्ति के मूल्य में गिरावट की वजह से अन्य भागीदार भी जो वैसे तो तरल और- शोधक्षम हैं, वे भी 'मार्क टू मार्केट' हानियों से बचने के लिए परिसम्पत्ति की बिक्री शुरु कर देंगे। परिणाम होगा परिसम्पत्ति के मूल्य में और अधिक गिरावट जिससे हानियां और अधिक होंगी और तुरत-फुरत बिक्री भी बढ़ जाएगी और इस प्रकार अपने हितों की सुरक्षा के लिए व्यक्तिगत संस्थाओं द्वारा किए जाने वाले तार्किक कार्य भी सामूहिक रूप से अतार्किक कार्य बन जाएंगे।

24. पूर्वचक्रिकता के संबंध में चूंकि बैंक बड़ी हानियाँ उठाते हैं, जो गिरावट के समय और भी मजबूत हो जाती हैं, इसलिए उनके लिए, और अधिक प्रावधान करने और अतिरिक्त पूंजी प्रदान करने की जरूरत होती है। इससे उनकी ऋण वितरण गतिविधियों में रुकावट आती है जो कि उनकी आर्थिक बहाली पर प्रतिकूल प्रभाव डालती हैं इसलिए बासेल समिति ने 'प्रतिचक्रिक अतिरिक्त पूंजी भंडार' बनाना निर्धारित किया है। बैंकों से अपेक्षा की गई है कि वो चढ़ाव के समय अतिरिक्त पूंजी भंडार बनाएं ताकि वह उतार के समय काम आ सके और उनकी ऋण वितरण गतिविधियां बनी रहें जिससे अर्थव्यवस्था में उतार का असर कुछ कम हो सके।

25. बासेल कमिटि ने प्रतिचक्रिक पूंजी भंडारों के केलीब्रेशन के लिए, मीट्रिक के रूप में 'क्रेडिट टू जीडीपी' का सुझाव दिया है। मॉडल में परिकल्पना की गई है कि प्रवृत्ति से विचलन चक्रिक है, इसलिए सुरक्षित भंडारों के निर्माण (रिलीज) के लिए ट्रिगर करना चाहिए। यह मॉडल उन्नत अर्थव्यवस्थाओं के लिए तो काम कर सकता है मगर भारत जैसी उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं के लिए प्रभावी रूप से कार्य न कर पाए, क्योंकि हमारे संदर्भ में 'क्रेडिट टू जीडीपी' अनुपात में विचलन केवल चक्रिक ही नहीं होगा बल्कि उसमें बड़े संरचनात्मक घटक भी हो सकते हैं। उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में जन संख्या के ऐसे बड़े घटक भी हैं जो अभी तक वित्तीय रूप से अनावेशित हैं। इन अर्थव्यवस्थाओं में वित्तीय समावेशन के लिए किये जा रहे प्रयासों से ऐसी जनसंख्या का बड़ा हिस्सा औपचारिक बैंकिंग में आ जाएगा, जिसके परिणामस्वरूप 'क्रेडिट टू जीडीपी अनुपात' में एकदम तेजी आएगी जिसे गलती से 'चक्रिक विचलन' समझा जा सकता है। इसके लिए भारत में हमने खासकर कृषि अर्थव्यवस्था से सेवा उन्मुख अर्थव्यवस्था में एक बड़ी छलांग लगायी है। विनिर्माण और इन्फ्रास्ट्रक्चर सेक्टरों को, जो कि उच्च पूंजी गहन हैं, और रोजगार पैदा करने वाले हैं, उन्हें मजबूत बनाने के हमारे वर्तमान प्रयासों के कारण 'क्रेडिट टू जीडीपी' रेशो में तेज उछाल आएगा जो आवश्यक नहीं कि चक्रिक प्रवृत्ति का संकेतक हो। अतः हम प्रतिचक्रिक नीति के रूप में एक क्षेत्रगत दृष्टि का पालन कर रहे हैं, जिसमें कतिपय ऐसे संवेदी क्षेत्रों के लिए, जो ओवर हीटिंग के संकेत देते हैं उनके लिए जोखिम भार और प्रावधानन अपेक्षाओं को अधिक मिश्रित कर रहे हैं। हमारा दृष्टिकोण काफी सफल रहा है मगर जिनमें हमने लक्ष्य किया था, उन सभी क्षेत्रों में हालांकि समान रूप से अच्छा नहीं है। बासेल समिति ने सेक्टरगत दृष्टिकोण को नहीं अपनाया मगर बैंक ऑफ इंग्लैंड ने इसे अपनी वृहद विवेकपूर्ण नीतियां तैयार करने के एक उपकरण

के रूप में अपनाया है। दृष्यनीय भविष्य में, रिज़र्व बैंक, पूर्ण संभवतः, पूर्वचक्रिकता से डील करने के लिए सेक्टरगत दृष्टिकोण ही जारी रखेगा। निर्धारित विधि से यह विचलन बासेल समिति के 'अनुपालन करो अथवा स्पष्ट करो' ढांचे के भीतर, अनुमत है, तथापि एक पक्ष यह भी है कि निर्धारित विधि से इस विचलन को बाजारों द्वारा अन-अनुपालन करार दिया जा सकता है। इससे बचाव के लिए हमें हमारे संचार में सुधार लाकर उसे तेज़ बनाना होगा।

26. पूर्वचक्रिकता से डील करने के लिए अपेक्षित हानि विधि पर आधारित, अच्छे वक्त के दौरान प्रावधानन बफर का निर्माण बासेल III के अंतर्गत, एक अन्य महत्त्वपूर्ण विनियामक कार्य है तथापि इस क्षेत्र में प्रगति बहुत धीमी रही है और अभी भी कार्य प्रगति पर है। एक अंतरिम उपाय के रूप में हम शीघ्र ही स्पेन के 'गतिशील प्रावधानन' विधि के प्रकार का ही प्रावधानन करने का विचार कर रहे हैं।

27. प्रतिचक्रिक नीतियां काफी महत्त्वपूर्ण हैं। भारत जैसे विकासशील देशों के लिए। क्योंकि इन देशों की आर्थिक परिस्थितियां इनके अनुकूल हैं। जहां विकास के लाभ समाज के वर्गों में पहुंचते पहुंचते बहुत समय लगता है वहां अस्थिरता का दर्द तत्काल रिस कर पहुंच जाता है। इसके अतिरिक्त गरीबी बढ़ने के संदर्भ में, यदि आउटपुट गिरता है, तो लागतें बढ़ती हैं, जो कि समान आउटपुट की बढ़त के मुकाबले, गरीबी में कमी-से लाभ कम दिखते हैं। अतः उभरते बाजारों के लिए वित्तीय स्थिरता महत्त्वपूर्ण है। संभवतः इसीलिए संकट से काफी पहले ही उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं में विवेकपूर्ण नीतियों की शुरुआत हो चुकी थी जबकि उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में बासेल III विनियमनों के बाद ही ये नीतियां शुरू हुई हैं। मैं यहां यह भी उल्लेख करना चाहूँगा कि जहां इस संकट से देश को सुरक्षित रूप से उबारने में रिज़र्व बैंक को साधुवाद दिया जा रहा है वहीं लोगों का यह भी मानना है कि अभी सतर्कता बरतना जरूरी है। मेरा विश्वास है कि हमें सतर्कता में कमी नहीं आने देनी चाहिए क्योंकि दुस्साहस की ऊंची कीमतों को अवशोषित करने के साधन हमारे पास नहीं हैं। यही कारण है कि हम सतर्क हुए और संकट शुरू होने से बहुत पहले ही प्रतिचक्रिक नीतियों का कार्यान्वयन शुरू कर दिया था और साथ ही हम वित्तीय विदेशी उत्पादों के प्रयोग को भी प्रोत्साहित नहीं करते।

28. प्रणालीगत जोखिम के प्रतिनिधिक आयाम अर्थात् अंतरर्जुड़ाव, को जारी करने की समस्या को हल करने के लिए, प्रणालीगत रूप से महत्वपूर्ण वित्तीय संस्थाओं (सीपी) को ध्यानाकर्षण केंद्र में लाया गया। वैश्विक प्रणालीगत रूप से महत्वपूर्ण वित्तीय संस्थाएं (जी-सीफी) तथा प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण घरेलू वित्तीय संस्थाएं (डी-सीफी) वे संस्थाएं हैं, अगर ये मुश्किल में आती हैं और असफल होती हैं, तो ये वित्तीय प्रणाली के लिए अधिक नकारात्मक बाह्यताएं निर्मित करती हैं। अतः यह आवश्यक है कि इन संस्थाओं को अधिक हानि अवशोषक बनाया जाए और इन का गहन पर्यवेक्षण किया जाए और इनके लिए मजबूत रेज़ोल्यूशन की व्यवस्था की जाए। सीफी की पहचान एक मापीय (मीट्रिक) के आधार पर की जाती है जिनमें कई कारकों को ध्यान में रखा जाता है जैसे वैश्विक गतिविधि, उनका आकार, प्रणाली के अन्य घटकों के साथ अंतर्जुड़ाव, उनकी स्थानापन्नता और उनके परिचालनों की जटिलता। जी-सीफी को उनकी प्रणालीगतता के आधार पर, एक प्रतिशत से 2.5 प्रतिशत की रेंज में अतिरिक्त पूंजी बना कर रखनी होती है। इस उच्च पूंजी को निर्धारित करने के दो कारण हैं, पहला, उच्चतर हानि अवशोषण क्षमता, जो जी-सीफी की संभावित असफलता को कम करेगी और यदि वे असफल हो गई तो उनकी असफलता के असर को कम करेंगी। दूसरा, उच्चतर पूंजी अपेक्षाएं, उनकी संपूर्णता को कम करने के लिए, जी-सीफी के लिए, एक अंतर्निर्मित प्रोत्साहक के रूप में कार्य करेंगी। डी-सीफी का फ्रेमवर्क वैसा ही है, मगर कम संरचित है और अधिक राष्ट्रीय डिस्क्रिशन के साथ।

29. किसी भी विनियामक व्यवस्था के प्रभावी होने के लिए मजबूत पर्यवेक्षकीय ढांचा अत्यंत आवश्यक है, विशेषकर सीफी के लिए पर्यवेक्षण की गहनता और प्रभावशीलता बढ़ाना, इन संस्थाओं द्वारा पैदा करने वाले चारित्रिक खतरों तथा नकारात्मक बाह्यताओं को कम करने के लिए एक प्रमुख घटक है। इसके लिए प्रभावी पर्यवेक्षण पर बासेल मूल्य सिद्धांतों (बी-सीपी) जो कि ऐसे वैश्विक मानक हैं, जिनके समक्ष आइ एमएफ-विश्व बैंक वित्तीय क्षेत्र आकलन कार्यक्रम (एफएसएपी) के एक अंश के रूप में पर्यवेक्षकों का असैस्मैंट किया जाता है, को हाल ही में पुनर्रचित किया गया है। संयुक्त फोरम ने बड़ी वित्तीय कंपनियों (कांगलो मेरेट्स) के पर्यवेक्षण के लिए सिद्धांत प्रकाशित किए हैं।

कई अन्य मुद्दों जैसे मॉडल जोखिम, प्रबंधन, निदेशक मंडलों और वरिष्ठ प्रबंधन की बढ़ी हुई स्क्रुटिनी सीफी द्वारा मजबूत नियंत्रण अपनाये जाने पर बल, क्षैतिजिक (हॉरीजांटल) समीक्षा, दबाव परीक्षण पर्यवेक्षकीय महाविद्यालय, वृहद विवेकपूर्ण निगरानी, तथा कारोबारी मॉडलों के जुड़े जोखिमों की परीक्षा - आदि का भी हल खोजा रहा है।

30. सीफी के लिए समाधान ढांचा एक अन्य ऐसा महत्त्वपूर्ण पहलू है जिस पर काम जारी है। एक मजबूत समाधान ढांचे की जरूरत इसीलिए है ताकि यदि प्रणालीगत रूप से महत्त्वपूर्ण और बड़ी संस्थाएं फेल हो जाएँ, तो उन्हे संकट से उबारने का बोझ सिर्फ सरकार पर ही न पड़ा रहे। एक सुपरिभाषित रेज़ोल्युशन व्यवस्था की मूल गतिविधियों को, गैर मूल गतिविधियों से अलग करके जारी रखा जाता है और - उसका अनुक्रम आर्डरली रेज़ोल्युशन द्वारा होता है। आपने इस संबंध में 'जीवित वसीयतों' के बारे में तो सुना ही होगा। एफएसबी, 'वित्तीय संस्थाओं के लिए प्रभावी रेज़ोल्युशन व्यवस्थाओं के प्रमुख कारक' को परिचालनात्मक बनाने के लिए, जैसे कि यह पहले प्रकाशित कर चुके हैं, रिकवरी तथा रेज़ोल्युशन लाने की दिशा-निर्देशन पर परामर्श भी कर रही है। अमरीका में डॉड फ्रैंक अधिनियम के अंतर्गत एक ऑर्डरली रेज्युलेशन ढांचा कार्यरत किया गया है।

31. बैंकिंग मॉडलों की रिवैंपिंग (पुरर्संरचना) पर भी एक गंभीर बहस चल रही है जो कि विशेषकर प्रणालीगतरूप से महत्त्वपूर्ण और जटिल संस्थाओं से संबंधित चिंताओं के परिप्रेक्ष्य में है। इस बात को काफी स्वीकार किया जा रहा है कि बैंकिंग प्रणाली का खुदरा हिस्सा जो कि जमाराशियों और खुदरा क्रेडिट के संदर्भ में लोगों को मूल सुविधाएं देता है, उसका सुरक्षित रहना जरूरी है। इस संबधं में तीन काफी सुपरिचित रिपोर्टें हैं। यूके विकर्स रिपोर्ट कहती है कि निवेश बैंकिंग गतिविधियों से खुदरा कारोबार की बाड़ेबंदी (रिगंफैन्सिंग) की जाए। अमरीका के डॉड-फ्रैंक अधिनियम के अंतर्गत वोकर नियम कुछ अपवादों के साथ प्रोपराइटरी ट्रेडिंग पर प्रतिबंध लगाने का प्रस्ताव करता है और हेज फंड्स, वेंचर कैपीटल फंड्स। तथा प्राइवेट इक्विटी निधियों को प्रायोजित करने वाले बैंकों पर कुछ सीमाएं लगाता है। हाल ही में यूरो जोन पर लीकनेन रिपोर्ट आई है जो लगभग इन्हीं की तरह की है।

32. शैडो बैंकिंग प्रणाली का निरीक्षण करने की आवश्यकता - संकट से मिली एक अन्य शिक्षा है। संकट के निर्माण के दौरान शैडो बैंकिंग प्रणाली बड़ी तेजी से बढ़ी और उसने नियमित बैंकिंग प्रणाली को, कई देशों में पछाड़ दिया। अविनियमित शैडो बैंकिंग प्रणाली में जोखिमों की जो शुरुआत हुई वह नियमित बैंकिंग प्रणाली में भी फैल गई और उसने संकट को और भी तेज़ कर दिया - मगर शैडो बैंकिंग प्रणाली के निरीक्षण / विनियमन का कार्य बासेल समिति ने तत्काल हाथ में नहीं लिया क्योंकि वह बैंकिंग विनियमन से जुड़े कार्य में व्यस्त थी जो कि स्वयं ही एक दूभर कार्य था। बैंकिंग विनियमों की पुनर्संरचना से संबंधित कार्य, क्योंकि अधिकतर पूरा हो चुका है इसलिए एफएसबी तथा बासेल समिति ने, शैडो बैंकिंग प्रणाली के निरीक्षण / विनियमन हेतु एक मजबूत फ्रेमवर्क लागू करने पर ध्यान केंद्रित किया है। बैंकिंग विनियमनों को कड़ा करने से शैडो बैंकिंग प्रणाली के निरीक्षण / विनियमन में सुधार का कार्य और भी महत्त्वपूर्ण हो गया है। क्योंकि दोनों प्रणालियों के बीच की विनियामक खाई चौड़ी हो जाने से विनियामक आर्बिट्रेज बढ़ने की संभावनाएं हो गई हैं, क्योंकि जोखिम, अधिक विनियमित बैंकिंग प्रणाली से, कम विनियमित शैडो बैंकिंग प्रणाली की ओर प्रवाहित होंगे।

33. शैडो बैंकों को विनियमित करना भी एक दुविधा का कार्य है। इन पर बैंकों जैसे विनियम लागू करना उपयुक्त नहीं होगा क्योंकि फिर ये उस लोचनीयता और नवोन्मेष से महरूम हो जाएंगे जिसके लिए कि ये जाने जाते हैं। इसके साथ चूंकि ये संस्थाएं, बैंकों जैसे ऋण मध्यस्थे का कार्य करती हैं इसलिए इस सैक्टर के प्रति काफी विभिन्न दृष्टिकोण अपनाने से काफी बड़े आर्बिट्रेज अवसर पैदा होंगे जिनसे प्रणालीगत जोखिम बढ़ेंगे। इस संबंध में द्विरूपी दृष्टिकोण अपनाने की अनुशंसा की जाती हैः सभी गैर बैंकिंग ऋण मध्यस्थता गतिविधियों के संबंध में डाटा इकट्ठा करने के लिए बड़ा तंत्र बनाना और फिर उसे केवल उन गैर-बैंकिंग ऋण मध्यस्थ संस्थाओं पर भी केन्द्रित कर देना जो कि परिपक्वता / चलनिधि रूपांतरण तथा लीवरेज के कारण जोखिम पैदा करने की क्षमता रखती है। ऋण मध्यवर्तियों के निरीक्षण/विनियमन हेतु मुख्यतः चार श्रेणी के दृष्टिकोण हैं, पहला है अप्रत्यक्ष दृष्टिकोण, जिसमें शैडों बैंकिंग प्रणाली को किए गए बैंकों के एक्सपोज़र को विनियमित करना। दूसरा है प्रत्यक्ष दृष्टिकोण जिसमें प्रतिभूतिगत ऋण वितरण तथा रेपो लेन-देनों के जोखिमों से

संबंधित समस्याओंका हल निकालने के लिए वृहद् विवेकपूर्ण उपाय करना। तीसरा दृष्टिकोण है प्रकटन बाध्यताओं तथा गतिविधियों पर प्रतिबंध लगाकर शैडो बैंकिंग गतिविधियों को विनियमित करना तथा चौथा दृष्टिकोण है शैडो बैंकिंग संस्थाओं का विनियमन करना अर्थात् इन संस्थाओं पर बैंक जैसा विनियमन लागू करना। परिपक्वता रूपांतरण तथा लीवरेज को सीमित करना। एफएसबी ने ''शैडो बैंकिंग के निरीक्षण तथा विनियमन को मजबूत बनाने की सिफारिशों का प्रारंभिक एकीकृत सैट'' तथा इस संबंध में प्राप्त प्रतिक्रियाओं को प्रकाशित किया है। जब निकट भविष्य में ही अंतिम मानक सामने आ जाएंगे तो देशों को इसका संज्ञान लेना होगा - और शैडो बैंकिंग से संबंधित समस्याओं के हल के लिए अपनी प्रणालियां बनानी होंगी।

34. भारत में लगभग 50 प्रतिशत ''शैडो बैंकिंग प्रणाली'' गैर-बैंकिंग वित्तीय कंपनियों (एनबीएफसी) से बनी है जिनका विनियमन रिज़र्व बैंक द्वारा किया जाता है, अन्य घटकों में अधिकतर बीमा तथा म्यूचुअल फंड भागीदार आते हैं, जो कि क्रमशः अन्य विनियामकों अर्थात् आईआरडीए तथा सेबी द्वारा विनियमित होते हैं। एनबीएफसी क्षेत्र के विनियमन को क्रमिक रूप से काफी कड़ा बनाया गया है। प्रारंभ में विनियमन, केवल जमाराशियां लेने वाली एनबीएफ कंपनियों तक ही सीमित था परंतु 2005-06 में ध्यान, जमाराशियां न लेने वाली एनबीएफ कंपनियों की ओर शिफ्ट किया गया, जो कि अपने अंतर्जुड़ावों के कारण प्रणालीगत रूप से काफी महत्त्वपूर्ण हैं। इन एनबीएफ कंपनियों की विनियामक व्यवस्था को काफी प्रबल बनाया गया। हमारा मानना है कि एनबीएफसी क्षेत्र के कड़े विनियमनों से ही संकट के दौरान भी हम मजबूती से खड़े रहे तथापि प्रतितथ्यात्मक रूप से इसके प्रति तर्क करना काफी कठिन है।

35. ओटीसी बाजार में पारदर्शिता में सुधार लाना, ओटीसी उत्पादों का मानकीकरण तथा अंतर्जुड़ाव के जोखिम को सीमित करने के लिए, केन्द्रीय प्रतिपार्टियों (सीसीपी) की ओर उनका गमन, प्रमुख सुधार कार्यसूचियां हैं। मगर इस प्रयास की आलोचना यह है कि ओटीसी उत्पादों को सीसीपी में गमनित करने से सभी जोखिमों के कुछ ही संस्थाओं में एकत्रित हो जाने की संभावना है जिसके कारण प्रणालीगत जोखिम निर्माण होगा और ऐसी संस्थाओं की संख्या बढ़ जाएगी 'जो इतनी महत्त्वपूर्ण है कि फेल नहीं हो सकती'। इस बात पर भी गंभीर बहस चल रही है कि क्या सीसीपीज़, जो कि प्रणालीगत रूप से बहुत महत्त्वपूर्ण बन गई हैं, क्या उन्हें केंद्रीय बैंक की ओर से चलनिधि सहायता प्रदान की जाए? यद्यपि वित्तीय प्रणाली में उनके महत्त्व को देखते हुए उन्हें ये सुविधाएं प्रदान करने के संबंध में मज़बूत तर्क हैं, मगर ऐसी सहायता प्रदान करते समय नैतिक खतरों संबंधी जरूरतों के मसले पर भी पर्याप्त ध्यान दिया जाना आवश्यक है। कुछ ऐसे क्षेत्र भी हैं जहां कार्य प्रगति पर है, जैसे कि काउंटर पार्टी ऋण जोखिम केंद्रीय प्रतिपक्षों (सीसीपीज़) को एक्सपोजर्स के लिए पूंजी इत्यादि।

## कुछ सुविधाएं और वादविवाद

36. विनियामक सुधारों का व्यापक परिदृश्य प्रस्तुत करने के बाद अब मैं नए विनियमों के कार्यान्वयन की चिंताओं, संदेहों तथा आशंकाओं पर बात करूँगा। सर्वाधिक बड़ी चिंता, वृद्धि पर उच्चतर पूंजी अपेक्षाओं के प्रतिकूल प्रभाव से संबंधित है, जो ईएमईज़ के संबंध में और भी ज्यादा है। यह एक जायज़ चिंता है। जैसे-जैसे पूंजी अपेक्षाएं बढ़ेंगी वैसे-वैसे परिचालनों की लागत बढ़ेगी क्योंकि इक्विटी महंगी है। बैंक इस स्थिति पर प्रक्रिया कई तरीकों से और कई मिश्रणों में दे सकते हैं। वे अपने गैर-मुख्य कारोबारों को बेच सकते हैं, परिसंपत्तियों को बेचकर तुलन-पत्र को घटा सकते हैं, ऋण वितरण परिचालन कम कर सकते हैं और ऋण-वितरण की लागत को बढ़ा सकते हैं, आदि। कुछ बैंक, पूंजी की उच्चतर लागत को अवशोषित करते हुए अपनी परिचालनात्मक क्षमता को बढ़ा सकते हैं तथा अपनी प्रतियोगितात्मकता में सुधार लासकते हैं। मगर संभावना यही है कि अधिकांश बैंक, ऋण वितरण कम कर देंगे और ऋण वितरण दरें बढ़ा देंगे जिससे कि आर्थिक वृद्धि पर बुरा असर पड़ेगा।

37. बासेल समिति ने विकास पर विनियमनों के असर का निर्धारण करने के लिए एक 'वृहदार्थिक निर्धारण (आकलन) समूह (एमएजी) स्थापित किया। समूह ने लगभग 100 अनुरूपणों (सिम्युलेशन्ज़) पर व्यापक अध्ययन कर निष्कर्ष निकाला कि यदि बासेल III अपेक्षाओं का कार्यान्वयन लंबी अवधि (35 तिमाहियों) के लिए किया गया तो वृद्धि पर असर न्यूनतम (अवधि के दौरान इसके आधार पंक्ति स्तर के नीचे 0.03 प्रतिशत प्रतिवर्ष) होगा और इस अवधि के

उपरांत आधारपंक्ति (बेसलाइन) की ओर वृद्धि में बहाली होगी। यह सहने योग्य होगा क्योंकि स्थायित्व के दीर्घावधि लाभ, अस्थिरता की कीमतों से पार पा लेंगे। यही कारण है कि कार्यान्वयन की अवधि इतनी लंबी (6 वर्ष) है।

38. अब मैं कुछ संरचनात्मक मुद्दों पर आता हूँ। एक मुद्दा जिस पर चर्चा चल रही है वह है वित्तीय गतिविधि का इष्टतम स्तर हमने यह पाया कि संकट से पूर्व वित्तीय विश्व ने अपने लिए एक ऐसा जीवन गढ़ लिया था जो संपदा क्षेत्र से विलग था जिसमें जटिलता बहुत थी। संकट से यह स्पष्ट शिक्षा मिली कि वित्त को संपदा क्षेत्र की जरूरतों का ध्यान रखना जरुरी है और इसे संपदा अर्थव्यवस्था की जरूरतों का आज्ञाकारी होना चाहिए। वित्तीय उत्पादों की जटिलता को कम करने के लिए भी काफी सघन प्रयास किए गए हैं। ऐसा एक उपाय है - ओटीसी उत्पादों का मानकीकरण करके तथा उन्हें केंद्रीय काउंटर पक्षों (सीसीपी) के जरिए सैटल करके ओटीसी उत्पादों को एक्सचेंजों में ले जाना। हालांकि कस्टमाइज़्ड (ग्राहकों की जरुरतों के अनुसार बनाए गए) (ओटीसी) उत्पादों के लिए सदा ही स्थान रहेगा मगर विनियामकों, पर्यवेक्षकों को यह सुनिश्चित करना होगा कि यह उत्पाद अनुचित रूप से जटिल न बन जाए।

39. शोध का एक आलग आयाम भी है जो आजकल काफी लोकप्रिय हो रहा है। मुद्दा यह है कि क्या बहुत अधिक वित्त वृद्धि के लिए अच्छा है। हाल का विश्लेषण बताता है कि कम स्तरों पर एक बड़ी वित्तीय प्रणाली उच्चतर उत्पादकता वृद्धि के साथ, हाथ में हाथ मिलाकर चलती है। मगर एक बिंदु ऐसा आता है जहां अधिक बैंकिंग तथा अधिक ऋण, कम वृद्धि के साथ जुड़ जाते हैं। यह अनिवार्यतः तभी होता है जब भौतिक तथा मानवीय संसाधन, संपदा क्षेत्र की बजाय वित्तीय क्षेत्र की ओर उन्मुख कर दिए जाते हैं।

40. अन्य मुद्दा इस दुविधा से संबंधित है कि क्या हमें बड़े बैंक चाहिएँ। संकट से हमें यह शिक्षा मिली है कि बहुत बड़ी संस्थाएं (एसआईएफआई) वित्तीय प्रणाली के लिए बड़ा खतरा पैदा करती हैं लेकिन कुछ लोगों का तर्क है कि स्पर्धात्मक बने रहने के लिए बैंकों को बड़ा होना ही पड़ेगा ताकि वे बड़ी किफायतों और संभावनाओं का लाभ उठा सकें। इसलिए प्रश्न अब यह है कि आखिर किसी वित्तीय संस्था को कितना बड़ा होने की अनुमति दी जानी चाहिए, कितना बड़ा सही बड़ा होगा? मुझे नहीं लगता है कि किसी के पास इसका सटीक उत्तर होगा। एक विकल्प यह हो सकता है कि आकार पर ध्यान न केंद्रित करके संस्थाओं की बनावट पर ध्यान दिया जाए और जटिल संरचनाओं को हतोत्साहित किया जाए। वित्तीय संस्थाओं की प्रणालीगतता के मापन के लिए जो मीट्रिक (मापाधार) प्रयोग किया जाता है उसके संबंध में मुझे यह समस्या लगती है कि यह एक संपूर्ण अथवा मात्रात्मक मापाधार नहीं बल्कि एक सापेक्ष मापाधार है। यह किसी बैंक की प्रणालीगतता का आकलन विभिन्न मापाधारों के वैश्विक जोड़ के संदर्भ में करता है। इस सापेक्ष दृष्किोण में सदा यह संभावना रहती है कि कोई बैंक तेज़ी से बढ़ने और जोखिमदार होने के बावजूद, यदि समूची बैंकिंग प्रणाली भी जोखिमवाली हो जाए, जिसके कारण इसका 'स्कोर' अपरिवर्तित रहे, तो एसआइएफआइ विनियमों से बच सकता है। यहां मैं यह भी कहना चाहूंगा कि बासेल समिति द्वारा विकसित विधि ही इस समय सबसे सर्वोत्तम है। बैंकिंग प्रणाली में हुई गतिविधियों को ध्यान में लेने के लिए, जैसे कि एक का मैंने पहले भी उल्लेख किया, इस विधि में हर तीन वर्ष में आवधिक समीक्षा करने का प्रावधान किया गया है। तथापि यदि कोई ऐसा मापाधार हो जो मात्रात्मक रूप में प्रणालीगतता की गणना करता हो तो वह और भी बेहतर रहेगा और यह ऐसा क्षेत्र है जिसमें आगे और अनुसंधान की ज़रूरत है।

41. आस्ति बुलबुलों के साथ व्यवहार करने में मौद्रिक नीति की भूमिका भी ऐसा मुद्दा है जिस पर चर्चा चल रही है। पहले यह धारणा प्रचलित थी कि मौद्रिक नीति में न ही तो अधिदेश है और न ही योग्यता, कि वह आस्ति बुलबुलों को रोक सके। उससे सिर्फ यही अपेक्षा की गई थी कि जब बुलबुला फट जाए तो वह उसके कचरे को साफ कर दे, लेकिन संकट के बाद अब यह सहमति बन रही है कि आस्ति बुलबुलों से निपटने में मौद्रिक नीति को और अधिक संतुलित भूमिका निभानी चाहिए और वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने के लिए इसे वृहद् विवेकपूर्ण नीतियों के साथ तालमेल करके काम करना चाहिए क्योंकि मौद्रिक नीति तथा वृहद् विवेकपूर्ण नीतियां, एक ही प्रकार के परिणाम सुनिश्चित करने के लिए कार्य करते हैं, और दोनों ही एक ही प्रकार के परिवर्तनीय कारकों अर्थात् ऋण की मात्रा और कीमत को प्रभावित करती हैं। अतः अर्थव्यवस्था के लिए उसकी लागत ऊंची होगी, यदि दोनों नीतियों को एक दूसरे के साथ, प्रति-प्रयोजनों के साथ

काम करना पड़े। विशुद्ध मुद्रास्फीति लक्षण, जो कि संकट से पूर्व एक प्रचलित परंपरागत विचार था अब उसमें संशोधन हो रहा है और अब कई लोग यह स्वीकार कर रहे हैं कि विशुद्ध मुद्रास्फीति लक्षण वित्तीय स्थिरता के संदर्भ में कोई आदर्श दृष्टिकोण नहीं है लेकिन यह बहस अभी तक पूरी नहीं हुई है, जारी है।

42. इस संदर्भ में जो एक और प्रश्न दिमाग में उठता है वह यह है कि वित्तीय स्थिरता का अधिदेश किसके पास होना चाहिए। केंद्रीय बैंक के पास होना चाहिए या सरकार के पास या स्वतंत्र बाहरी एजेंसी के पास। संकट के बाद बहुत से मॉडल बने हैं जिनमें अधिकांश सहशासी हैं और उनमें केन्द्रीय बैंक, सरकार तथा अन्य विनियामक सहभागी हैं। एक अन्य नज़रिया है जो इस बात का समर्थन करता है कि वित्तीय स्थिरता की जिम्मेदारी केन्द्रीय बैंक के पास होनी चाहिए। ऐसा यूके तथा मलेशिया जैसे देशों के साथ है। जैसा कि मैने पहले भी उल्लेख किया है कि वित्तीय स्थिरता को सुनिश्चित करने के लिए, मौद्रिक नीति तथा वृहद् विवेकपूर्ण नीतियों को आपस में तालमेल के साथ काम करना चाहिए। मौद्रिक नीति, केन्द्रीय बैंकों की परिधि में आती है। इसके अतिरिक्त केन्द्रीय बैंकों के पास, मौद्रिक नीति चलाने के अधिदेश के कारण, वृहद् अर्थव्यवस्था तथा वित्तीय बाजारों पर भी अंकुश रखने का अधिकार है। केन्द्रीय बैंकों को वित्तीय संस्थाओं का भी काफी ज्ञान रहता है यहां तक कि ऐसे प्रकरणों में भी, जहां वे विनियामक या पर्यवेक्षक नहीं हैं। अतः केन्द्रीय बैंक, वित्तीय स्थिरता सुनिश्चित करने अथवा सहशासी दृष्टिकोण में कम से कम एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए, एक आदर्श चयन प्रतीत होते हैं।

43. मुद्रास्फीति लक्ष्ययन के विपरीत, जहां कि एक 'एकल संख्या' नीतियों की प्रभावशीलता को मापने के लिए निर्धारित की जाती है, वृहद् विवेकपूर्ण नीतियों में ऐसी कोई चीज नहीं है। वृहद् विवेकपूर्ण नीतियों की सफलता, प्रतितथ्यात्मकों (काउंटर फैक्चुअल्ज़) के आधार पर स्थापित नहीं की जा सकती। अतः सही जिम्मेदारी सुनिश्चित करने के लिए, उत्तरदायित्व निर्धारण हेतु, उद्देश्यों और विधियों, का स्पष्ट कम्युनिकेशन अत्यंत अनिवार्य है।

44. जहां तक चलिनिधि (नकदी) जोखिम का संबंध है, यद्यपि 'चलनिधि-व्यापन-अनुपात' हेतु फ्रेमवर्क स्थापित है, फिर भी एलसीआर तथा मौद्रिक नीति के बीच इंटर एक्शन से संबंधित कुछ मुद्दे हैं। इन मुद्दों की जांच चल रही है।

45. बासेल III का कार्यान्वयन भी स्वयं ही एक बहस पैदा कर रहा है। पहले इसका कार्यान्वयन 1 जनवरी 2013 से किये जाने की योजना थी, यद्यपि हमारा वित्तीय वर्ष 1 अप्रैल से शुरू होता है। तथापि हमने अंतरराष्ट्रीय शिड्यूल के साथ हमारे कार्यान्वयन शिड्यूल को जोड़ने के लिए, हमने इसका कार्यान्वयन 1 जनवरी 2013 से करना प्रस्तावित किया था। परंतु हमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अधिकार क्षेत्र अर्थात् अमरीका और यूरोज़ोन, जो कि बासेल III के कार्यान्वयन में अग्रगामी अपेक्षित हैं, इस शिड्यूल का पालन नहीं कर पाए अतः हमने अपने कार्यान्वयन की तारीख 1अप्रैल 2013 कर दी है जो हमें ज्यादा उपयुक्त है। मेरे विचार में बासेल III के सुगम कार्यान्वयन के लिए यदि अमरीका और यूरोज़ोन, कार्यान्वयन के प्रारंभ की निश्चित तिथि घोषित कर दें तो बेहतर रहेगा क्योंकि इससे कार्यान्वयन की अंतिम तारीख दिसंबर 31, 2018 में कोई परिवर्तन नहीं होगा।

46. विनियमों की बढ़ती जटिलताओं ने एक दिलचस्प बहस छेड़ दी है कि क्या अधिक जटिल विनियम, आवश्यकता से अधिक प्रभावी होते हैं और क्या वे अपने विनियामक उद्देश्यों को प्राप्त करते हैं। बैंक ऑफ इंग्लैड के कार्यपालक निदेशक, एण्ड्रयू हाल्डेन का एक बड़ा दिलचस्प पर्चा है, 'द डॉग इन द फ्रिस्बी', जिसमें यह बताया गया है कि विनियमों की बढ़ती जटिलता असल में प्रति उत्पादक (काउंटर प्रोडक्टिव) होती है। उनका तर्क है कि जटिल जोखिम भारित प्रणाली की तुलना में, संकट के दौरान, साधारण लीवरेज अनुपात, प्रणाली में तनाव का एक अधिक प्रभावी भविष्य वक्ता होता है और इसलिए, विनियामक प्रयोजन के लिए जटिल मापों की बजाय साधारण जोखिम मापों को तरजीह दी जानी चाहिए। जोखिम भार के साथ एक और समस्या यह भी है कि, वही या उसी तरह के पोर्टफोलियो पाए जाते है, जिससे विरोधी पूंजी आवश्यकताएं प्रदर्शित होती हैंजिससे जोखिम मॉडलों की अविश्वसनीयता (फॉलिबिलिटी) परिलक्षित होती है। इस संबंध में मेरा व्यक्तिगत विचार यह है कि चूंकि वित्तीय मॉडल बहुत जटिल हो चुके हैं अतः साधारण जोखिम उपायों से काम नहीं चलेगा। इसके अलावा, किसी सिंगल मापाधार से भी काम नहीं चलेगा क्योंकि यह एक जुए जैसा होगा। मेरा

अनुमान है कि यदि साक्ष्य यह दिखलाता है कि यदि साधारण लीवरेज अनुपात बैंकों में दबाव (तनाव) का अधिक प्रभावी भविष्य सूचक था तो यह संभवतः इसलिए था क्योंकि यह निकट से देखा गया मापाधार (मीट्रिक) नहीं था। जिस क्षण किसी मापाधार (मीट्रिक) के इर्द-गिर्द विनियम बनेंगे तभी इसे 'गेम' करने के लिए प्रोत्साहन भी शुरू हो जाएंगे। इसके अतिरिक्त साधारण लीवरेज अनुपात का गिरता पक्ष यह है कि इससे बैंकों के पास यह प्रोत्साहन होगा कि वे विनिर्दिष्ट पूंजी हेतु और जोखिम भरे पोर्टफोलियो रखें। इसलिए समाधान यही है कि लीवरेज अनुपात तथा जोखिम आधारित मापनों को मिश्रित कर, मॉडलों को और अधिक मजबूत तथा पारदर्शी बनाया जाए।

47. समेकन एक ऐसा अन्य मुद्दा है जो अत्यंत ही महत्त्वपूर्ण है मगर इस पर अभी तक समुचित ध्यान केन्द्रित नहीं किया गया है। विशिष्टतः एसआइएफआइ से डील करते समय, समग्र जोखिम के आकलन के लिए एक समेकित / समूह आधारित दृष्टिकोण अपनाया जाता है मगर संकट ने दिखाया है कि समेकन से संबंधित नियम अपर्याप्त हैं। अधिकांश अधिकार क्षेत्रों में समेकन, लेखांकन (एकाउन्टिंग) नियमों पर आधारित होता है और आवश्यक नहीं कि विवेकपूर्ण अपेक्षाओं के लिए लेखांकन नियम ही सर्वोत्तम समाधान हो। संकट से ली गई शिक्षाओं के आधार पर यह जरूरी लगा है कि समेकन हेतु लेखांकन नियमों को विवेकपूर्ण उद्देश्यों के साथ जोड़ा जाए तो बेहतर रहेगा। असल में, आइएसबी ने आईएफआरएस 10 के जरिये समेकन मानकों में संशोधन किया है हालांकि आइएफआरएस की शुरुआत कर दी गई है मगर विवेकपूर्ण परिप्रेक्ष्य से, स्थायी समेकन दिशा-निर्देश तैयार करने की दिशा में अभी काफी कार्य किया जाना बाकी है। अब मैं समेकन से संबंधित नए अकाउंटिंग दिशा-निर्देशों में प्रमुख बदलावों पर चर्चा करूंगा। संशोधित अकाउंटिंग दिशा निर्देशों में, नियंत्रण को, पुनः परिभाषित किया गया है। अब तक नियंत्रण की परिभाषा ''इक्विटी धारण अथवा अन्यथा वोटिंग पावर का 50 प्रतिशतसे अधिक होना'' बताई गयी थी। आईएफआर-10 में इसकी परिभाषा दूसरे परिप्रेक्ष्य में इस संभावना को मानते हुए की गई है कि बहुमत से कम वोटिंग अधिकार रखनेवाला निवेशक भी नियंत्रण रख सकता है। निदर्शनात्मकरूप से आईएफआर-10 एक ऐसी स्थिति बताता है, जहां बहुमत से कम वोटिंग अधिकार रखने वाले किसी निवेशक के पास एक पक्षीय रूप से ही निवेशिती की संबंधित गतिविधियों को निर्देशित करने की व्यावहारिक योग्यता रख सकता है। बशर्ते उसकी वोटधारिता, अन्य वोट धारकों की तुलना में अपेक्षाकृत अधिक हो तथा अन्यों की वोटधारिता इतनी छितरी हुई हो कि इस निवेशक को आउटवोट करने के लिए, इनमेंसे बहुतों को एक साथ मिलकर काम करने की जरूरत पड़ती है।

48. ''बडे एक्सपोज़र्स'' एक अन्य महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं जिनके लिए बासेल समिति ने एक कार्यदल स्थापित किया है। बड़े एक्सपोज़रों के संबंध में विनियामक पद्धतियां काफी भिन्न हैं उदाहरणतः कई क्षेत्राधिकार, एक्सपोज़र की गणना करते समय, संपार्श्विक समायोजन को शामिल करते हैं जबकि भारत सहित अन्य कई देश शामिल नहीं करते. एक्सपोजर सीमाएं भी काफी भिन्न हैं इसके मानक निर्धारित करने की जरूरत है।

49. अब मैं पर्यवेक्षण तथा इस संबंध में हाल में आए विचारों और परिवर्तनों पर चर्चा करूंगा। वित्तीय प्रणली को सुरक्षित बनाने के किसी भी प्रयास में पर्यवेक्षण, केंद्रीय भूमिका निभाता है और किसी भी विनियामक प्रयास को यदि सफल होना है तो पर्यवेक्षण प्रभावी होना जरुरी है। नियम (विनियम) बनाना कठिन है मगर वित्तीय संस्थाओं से इनका पालन करवाना और भी कठिन है जिसके लिए एक बहुत ही प्रभावी पर्यवेक्षकीय तंत्र की जरूरत होती है। किसी प्रभावी पर्यवेक्षण के आवश्यक घटक कौन-कौन से होते हैं? यहां मैं आईएमएफ स्टाफ पोज़ीशन नोट[1] का उद्धरण प्रस्तुत करना चाहूंगा जिसमें बड़ी स्पष्टता से प्रभावी पर्यवेक्षण के लक्षणों की व्याख्या की गई है। अच्छा पर्यवेक्षण अंतर्वेधी होना चाहिए। जैसा कि मैंने पहले भी उल्लेख किया है कि जब, सब कुछ ठीक चल रहा हो तो पर्यवेक्षकों को सही प्रश्न पूछने चाहिएँ। अच्छे पर्यवेक्षण को संदेहवादी मगर पूर्व क्रियात्मक होना चाहिए। जिसका अर्थ यह है कि पर्यवेक्षक को चीजें जैसी दिखती हैं वैसी नहीं लेनी चाहिए। अच्छा पर्यवेक्षण व्यापक होता है। किसी बैंक के साथ डील करते समय पर्यवेक्षकों को, सामूहिक स्तर पर, संपूर्णता की दृष्टि से देखने की जरुरत है। पर्यवेक्षण को अनुकूलनीय होना चाहिए क्योंकि वित्तीयप्रणाली बहुत गतिशील और तेज

[1] अच्छा पर्यवेक्षण कैसे हो : 'लर्निंग टू से नो'; जोस बिनाल्स तथा जोनाथन फिक्टर, आईएमएफ स्टाफ पोज़ीशन नोट, एसपीएन /10/08

चलनेवाली होती है अतः हर समय नयी-नयी बातें होती रहती हैं। अतः पर्यवेक्षकों को इनके प्रति सतर्क और अद्यतन रहने की जरुरत है। अच्छा पर्यवेक्षण निष्कर्षी होता है। खोजबीन तथा चर्चा और विचार-विमर्शों के जरिए पर्यवेक्षकों को अपने निष्कर्षों को तार्किक निष्कर्ष तक पहुंचाने की जरुरत होती है। इन लक्षणों से भी सबसे ऊपर, आइएमएफ नोट ने दो विशेषताओं का उल्लेख किया है, जो अच्छे पर्यवेक्षण का महत्त्व प्रदर्शित करती हैं; एक है - करने की सामर्थ्य और दूसरी है करने की इच्छा। करने की सामर्थ्य विधिक प्राधिकार तथा आवश्यक संसाधनों दोनों की संख्याओं और गुणवत्ता पर आधारित है। कौशल की उपलब्धता एक बहुत ही महत्त्वपूर्ण तत्त्व है कौशल निर्माण तथा अच्छी कम्पेंसेशन नीतियों के संदर्भ में सक्षम मानव संसाधन आयोजना की जरूरत होती है। करने की सामर्थ्य अन्य विनियामकों के साथ प्रभावी कार्यकारी संबंधों पर भी निर्भर होती है। खासकर पर्यवेक्षकीय संस्थाओं के लिए, जिनकी विदेशों में भी उपस्थिति होती है। दूसरी ओर, करने की इच्छा स्पष्ट और असंदिग्ध अधिदेश, परिचालनात्मक स्वतंत्रता, उत्तरदायित्व उद्योग के साथ स्वस्थ संबंध, इत्यादि कारकों पर आधारित होती है।

50. चर्चाका एक अन्य सक्रियविषय पर्यवेक्षण के बारे में है कि क्या इसे केन्द्रीय बैंक के पास होना चाहिए। इस संबंध में विभिन्न देशोंमें विभिन्न पद्धतियां हैं। ऐसे कई देश हैं जहां पर्यवेक्षण एक-मात्र केन्द्रीय बैंक की जिम्मेदारी है। जब कि ऐसे कुछ अन्य देश भी हैं जहां यह जिम्मेदारी कई एजेंसियों द्वारा बांटी जाती है। और कुछ अन्य मामलों में पर्यवेक्षण केन्द्रीय बैंक की परिधि से पूरी तरह बाहर है। एफएसए मॉडल, जो कि केन्द्रीय बैंक की परिधि से बाहर पर्यवेक्षण के एकीकृत दृष्टिकोण पर आधारित था उसने संकट के पूर्व की अवधि में काफी प्रतिष्ठा पाई तथापि हमारा अपना अनुभव और संकट के दौरान प्राप्त अनुभव हमें यह बताता है कि केन्द्रीय बैंक में बैंकिंग प्रणाली हेतु पर्यवेक्षकीय उत्तरदायित्व देना ज्यादा सही है। यूके की एफएसए से प्रुडेंशियल रेग्युलेटरी अथॉरिटी (पीआरए) बनाना, तथा पीआरए के, बैंक ऑफ इंग्लैंड की सहायक संस्था (सब्सिडियरी) बना, इस संबंध में उल्लेखनीय है।

51. संकट के बाद इतःपूर्व 'कैमल्स दृष्टिकोण' से जोखिम आधारित सुपरविज़न (आरबीएस) की ओर बदलाव हुआ है। कैमल्स, अनिवार्यतः एक स्कोर कार्ड आधारित दृष्टिकोण है, जो कि एक पीछे की ओर देखने वाली विधि अधिक है और विलंब के साथ परिचालन करने वाला एक ट्रांजेक्शन परीक्षण मॉडल है। दूसरी ओ। आरबीएस एक आगे की ओर देखने वाला दृष्टिकोण है क्योंकि यह बैंकों में जोखिम के निर्माण का आकलन करता है। आरबीएस पर्यवेक्षकीय संसाधनों के संरक्षण में भी सहायक है। मैं संयुक्त दृष्टिकोण का समर्थक हूँ। मेरे खयाल से कैमल्ज़ दृष्टिकोण का पालन करते हुए भी जोखिम के वितरण और इसकी दिशा का आकलन करना चाहिए जो कि बैंकों के और अधिक व्यापक आकलन में परिणत होगी। आरबीएस के अंतर्गत पर्यवेक्षक, अनिवार्यतः बैंकों की जोखिम प्रबंधन प्रणालियों द्वारा प्रदान किए गए इन्पुट्स पर भरोसा करते हैं। अतः आरबीएस उतनी ही प्रभावशाली हो सकती है जितनी कि बैंक की जोखिम प्रबंधन प्रणालियां। आरबीएस को विषयगत निर्धारणों द्वारा अनुपूरित किया जा सकता है जो साझे एक्सपोज़र्स तथा साझे कारणों की वजह से पैदा हुए जोखिमों का हल निकाल सकते हैं। पर्यवेक्षकीय विधि काफी ध्यानाकर्षण केंद्र में है और इसका निरंतर मूल्यांकन करके इसमें सुधार लाने की जरुरत है ताकि वित्तीय प्रणाली को सुरिक्षत बनाया जा सके क्योंकि केवल विनियमन बनाना ही पर्याप्त नहीं होता।.

52. अंत में दबाव / तनाव परीक्षण की आवश्यकता पर चर्चा करूँगा। जैसा कि मैंने पहले उल्लेख किया है व्यवहारगत पहलुओं की वजह से जोखिम मॉडलों की अपनी सीमाएं होती हैं। दबाव परीक्षण, जोखिम प्रबंधन का, एक आवश्यक उपकरण है जो पर्यवेक्षकों को यह जानने में मदद देता है कि अंतिम सिरों पर क्या हो रहा है।

53. अपने वक्तव्य के अंत में मैं एक उदाहरण देना चाहूँगा जो हाल ही में मेरी नज़र में आया। *'हर संकट में एक संदेश छुपा होता है। संकट, परिवर्तन लाने, पुराने ढांचे तोड़ने, तथा ढीली नकारात्मक आदतों को बदलने का अपना तरीका है ताकि कुछ नया और बेहतर हो सके'*[2]। आइए हम संकट से मिले संदेश और शिक्षाओं पर अमल करें और एक मजबूत तथा सुनम्य वित्तीय प्रणाली के लिए आगे बढ़ें।

धन्यवाद !

[2] सूसन एल टेलर।

**संदर्भः**

सेक्चेत्ती, स्टीफेन जी तथा ख़ारुबी, एनिस (2012) 'रीएसेसिंग द इम्पैक्ट ऑफ फाइनेन्स ऑन ग्रोथ', बीआइएस वर्किंग पेपर्स नं, 381

हाल्देन, एण्ड्रयू जी एण्ड मैडूरोस, वैसिलियोस (2012) 'द डॉग एण्ड द फ्रिज्बी' फेडरल रिज़र्व बैंक ऑफ कैन्सास सिटी के 366 वें आर्थिक नीति सिम्पोज़ियम में अभिभाषण।

अंतर्राष्ट्रीय मुद्राकोष, डब्ल्यूईओ अपडेट (जनवरी 2013)

मोहन राकेश (2007); इंडियाज़ फाइनेन्शियल सेक्टर रिफॉर्म्स, फोस्टरिंग ग्रोथ व्हाइल कन्टेनिंग रिस्क' भाषण, भारतीय रिज़र्व बैंक

शेंग एन्ड्यू (2009): 'फ्रॉम एशियन टू ग्लोबल फाइनेन्शियल क्राइसिस'

रेड्डी वाइ वी(2011): 'ग्लोबल क्राइसिस, रिसेशन एण्ड अनईवन रिकवरी

''अच्छा पर्यवेक्षण कैसे हो: लर्निंग टू से नो'' विनाल्स जोस एण्ड फिक्टर तथा जोनाथन, आइएमएफ स्टाफ पोज़ीशन नोट, एसपीएन/10/08